व्यंग्य

गँजहों के गाँव का लोकतंत्र

श्रीलाल शुक्ल

तहसील का मुख्यालय होने के बावजूद शिवपालगंज इतना बड़ा गाँव न था कि उसे टाउन एरिया होने का हक मिलता। शिवपालगंज में एक गाँव-सभा थी और गाँववाले उसे गाँव-सभा ही बनाए रखना चाहते थे ताकि उन्हें टाउन एरियावाली दर से ज्यादा टैक्स न देना पड़े। इस गाँव-सभा के प्रधान रामाधीन भीखमखेड़वी के भाई थे जिनकी सबसे बड़ी सुंदरता यह थी कि वे इतने साल प्रधान रह चुकने के बावजूद न तो पागलखाने गए थे, न जेलखाने। गँजहों में वे अपनी मूर्खता के लिए प्रसिद्ध थे और उसी कारण, प्रधान बनने के पहले तक, वे सर्वप्रिय थे। बाहर से अफसरों के आने पर गाँववाले उनको एक प्रकार से तश्तरी रख कर उनके सामने पेश करते थे। और कभी-कभी कह भी देते थे कि साहेब, शहर में जो लोग चुन कर जाते हैं उन्हें तो तुमने हजार बार देखा होगा, अब एक बार यहाँ का भी माल देखते जाओ।

गाँव-सभा के चुनाव जनवरी के महीने में होने थे और नवंबर लग चुका था। सवाल यह था कि इस बार किस को प्रधान बनाया जाए? पिछले चुनावों में वैद्य जी ने कोई दिलचस्पी नहीं ली क्योंकि गाँव-सभा के काम को वे निहायत जलील काम मानते थे। और वह एक तरह से जलील था भी, क्योंकि गाँव-सभाओं के अफसर बड़े टुटपुँजिया क़िस्म के अफसर थे। न उनके पास पुलिस का डंडा था, न तहसीलदार का रुतबा, और उनसे रोज-रोज अपने काम का मुआयना करने में आदमी की इज्जत गिर जाती थी। प्रधान को गाँव-सभा की जमीन-जायदाद के लिए मुकदमे करने पड़ते थे और शहर के इजलास में वकीलों और हाकिमों का उनके साथ वैसा भी सलूक न था जो एक चोर का दूसरे चोर के साथ होता है। मुकदमेबाजी में दुनिया-भर की दुश्मनी लेनी पड़ती थी और मुसीबत के वक़्त पुलिसवाले सिर्फ मुस्करा देते थे उन्हें मोटे अक्षरों में 'परधान जी' कह कर थाने के बाहर का भूगोल समझाने लगते थे।

पर इधर कुछ दिनों से वैद्य जी की रुचि गाँव-सभा में भी दिखने लगी थी, क्योंकि उन्होंने प्रधानमंत्री का एक भाषण किसी अखबार में पढ़ लिया था। उस भाषण में बताया गया था कि गाँवों का उद्धार स्कूल, सहकारी समिति और गाँव-पंचायत के आधार पर ही हो सकता है और अचानक वैद्य जी को लगा कि वे अभी तक गाँव का उद्धार सिर्फ कोऑपरेटिव यूनियन और कॉलिज के सहारे करते आ रहे थे और उनके हाथ में गाँव-पंचायत तो है ही नहीं। 'आह!' उन्होंने सोचा होगा, 'तभी शिवपालगंज का ठीक से उद्धार नहीं हो रहा है। यही तो मैं कहूँ कि क्या बात है?'

रुचि लेते ही कई बातें सामने आईं। यह कि रामाधीन के भाई ने गाँव-सभा को चौपट कर दिया है। गाँव की बंजर जमीन पर लोगों ने मनमाने कब्जे कर लिए हैं और निश्चय ही प्रधान ने रिश्वत ली है। गाँव-पंचायत के पास रुपया नहीं है और निश्चय ही प्रधान ने गबन किया है। गाँव के भीतर बहुत गंदगी जमा हो गई है और प्रधान निश्चय ही सुअर का बच्चा है। थानेवालों ने प्रधान की शिकायत पर कई लोगों का चालान किया है जिससे सिर्फ यही नतीजा निकलता है कि वह अब पुलिस का दलाल हो गया है। प्रधान को बंदूक का लाइसेंस मिल गया है जो निश्चय ही डकैतियों के लिए उधार जाती है और पिछले साल गाँव में बजरंगी का कत्ल हुआ था, तो बूझो कि क्यों हुआ था?

भंग पीनेवालों में भंग पीसना एक कला है, कविता है, कार्रवाई है, करतब है, रस्म है। वैसे टके की पत्ती को चबा कर ऊपर से पानी पी लिया जाए तो अच्छा-खासा नशा आ जाएगा, पर यहाँ नशेबाजी सस्ती है। आदर्श यह है कि पत्ती के साथ बादाम, पिस्ता, गुलकंद दूध-मलाई आदि का प्रयोग किया जाए। भंग को इतना पीसा जाए कि लोढ़ा और सिल चिपक कर एक हो जाएँ, पीने के पहले शंकर भगवान की तारीफ में छंद सुनाए जाएँ और पूरी कार्रवाई को व्यक्तिगत न बना कर उसे सामूहिक रूप दिया जाए।

सनीचर का काम वैद्य जी की बैठक में भंग के इसी सामाजिक पहलू को उभारना था। इस समय भी वह रोज की तरह भंग पीस रहा था। उसे किसी ने पुकारा, 'सनीचर!' सनीचर ने फुँफकार कर फन-जैसा सिर ऊपर उठाया। वैद्य जी ने कहा, 'भंग का काम किसी और को दे दो और यहाँ अंदर आ जाओ।'

जैसे कोई उसे मिनिस्टरी से इस्तीफा देने को कह रहा हो। वह भुनभुनाने लगा, 'किसे दे दें? कोई है इस काम को करनेवाला? आजकल के लौंडे क्या जानें इन बातों को। हल्दी-मिर्च-जैसा पीस कर रख देंगे।' पर उसने किया यही कि सिल-लोढ़े का चार्ज एक नौजवान को दे दिया, हाथ धो कर अपने अंडरवियर के पीछे पोंछ लिए और वैद्य जी के पास आ कर खड़ा हो गया।

तख्त पर वैद्य जी, रंगनाथ, बद्री पहलवान और प्रिंसिपल साहब बैठे थे। प्रिंसिपल एक कोने में खिसक कर बोले, 'बैठ जाइए सनीचरजी!'

इस बात ने सनीचर को चौकन्ना कर दिया। परिणाम यहाँ हुआ कि उसने टूटे हुए दाँत बाहर निकाल कर छाती के बाल खुजलाने शुरू कर दिए। वह बेवकूफ-सा दिखने लगा, क्योंकि वह जानता था चालाकी के हमले का मुकाबला किस तरह किया जाता है। बोला, 'अरे प्रिंसिपल साहेब, अब अपने बराबर बैठाल कर मुझे नरक में न डालिए।'

बद्री पहलवान हँसे। बोले, 'स्साले! गँजहापन झाड़ते हो! प्रिंसिपल साहब के साथ बैठने से नरक में चले जाओगे?' फिर आवाज बदल कर बोले, 'बैठ जाओ उधर।'

वैद्य जी ने शाश्वत सत्य कहनेवाली शैली में कहा, 'इस तरह से न बोलो बद्री। मंगलदास जी क्या होने जा रहे हैं, इसका तुम्हें कुछ पता भी है?'

सनीचर ने बरसों बाद अपना सही नाम सुना था। वह बैठ गया और बड़प्पन के साथ बोला, 'अब पहलवान को ज्यादा जलील न करो महाराज। अभी इनकी उमर ही क्या है? वक़्त पर सब समझ जाएँगे।'

वैद्य जी ने कहा, 'तो प्रिंसिपल साहब, कह डालो जो कहना है।'

उन्होंने अवधी में कहना शुरू किया, 'कहै का कौनि बात है? आप लोग सब जनतै ही।' फिर अपने को खड़ीबोली की सूली पर चढ़ा कर बोले, 'गाँव-सभा का चुनाव हो रहा है, यहाँ का प्रधान बड़ा आदमी होता है। वह कॉलिज-कमेटी का मेंबर भी होता है - एक तरह से मेरा भी अफ़सर।'

वैद्य जी ने अकस्मात कहा, 'सुनो मंगलदास, इस बार हम लोग गाँव-सभा का प्रधान तुम्हें बनाएँगे।'

सनीचर का चेहरा टेढ़ा-मेढ़ा होने लगा। उसने हाथ जोड़ दिए - पुलक गात लोचन सलिल। किसी गुप्त रोग से पीड़ित, उपेक्षित कार्यकर्ता के पास किसी मेडिकल असोसिएशन का चेयरमैन बनने का परवाना आ जाए तो उसकी क्या हालत होगी? वही सनीचर की हुई। फिर अपने को क़बू में करके उसने कहा, 'अरे नहीं महाराज, मुझ-जैसे नालायक को आपने इस लायक समझा, इतना बहुत है। पर मैं इस इज्जत के काबिल नहीं हूँ।'

सनीचर को अचंभा हुआ कि अचानक वह कितनी बढ़िया उर्दू छाँट गया है। पर बद्री पहलवान ने कहा, 'अबे, अभी से मत बहक। ऐसी बातें तो लोग प्रधान बनने के बाद कहते हैं। इन्हें तब तक के लिए बाँधे रख।'

इतनी देर बाद रंगनाथ बातचीत में बैठा। सनीचर का कंधा थपथपा कर उसने कहा, 'लायक-नालायक की बात नहीं है सनीचर! हम मानते हैं कि तुम नालायक हो पर उससे क्या? प्रधान तुम खुद थोड़े ही बन रहे हो। वह तो तुम्हें जनता बना रही है। जनता जो चाहेगी, करेगी। तुम कौन हो बोलनेवाले?'

पहलवान ने कहा, 'लौंडे तुम्हें दिन-रात बेवकूफ बनाते रहते हैं। तब तुम क्या करते हो? यही न कि चुपचाप बेवकूफ बन जाते हो?'

प्रिंसिपल साहब ने पढ़े-लिखे आदमी की तरह समझाते हुए कहा, 'हाँ भाई, प्रजातंत्र है। इसमें तो सब जगह इसी तरह होता है।' सनीचर को जोश दिलाते हुए वे बोले, 'शाबाश, सनीचर, हो जाओ तैयार!' यह कह कर उन्होंने 'चढ़ जा बेटा सूली पर' वाले अंदाज से सनीचर की ओर देखा। उसका सिर हिलना बंद हो गया था।

प्रिंसिपल ने आखिरी धक्का दिया, 'प्रधान कोई गबड़ू-घुसड़ू ही हो सकता है। भारी ओहदा है। पूरे गाँव की जायदाद का मालिक! चाहे तो सारे गाँव को 107 में चालान करके बंद कर दे। बड़े-बड़े अफ़सर आ कर उसके दरवाजे बैठते हैं! जिसकी चुगली खा दे, उसका बैठना मुश्किल। कागज पर जरा-सी मोहर मार दी और जब चाहा, मनमाना तेल-शक्कर निकाल लिया। गाँव में उसके हुकुम के बिना कोई अपने घूरे पर कूड़ा तक नहीं डाल सकता। सब उससे सलाह ले कर चलते हैं। सब की कुंजी उसके पास है। हर लावारिस का वही वारिस है। क्या समझे?'

रंगनाथ को ये बातें आदर्शवाद से कुछ गिरी हुई जान पड़ रही थीं। उसने कहा, 'तुम तो मास्टर साहब, प्रधान को पूरा डाकू बनाए दे रहे हो।'

'हें-हें-हें' कह कर प्रिंसिपल ने ऐसा प्रकट किया जैसे वे जान-बूझ कर ऐसी मूर्खतापूर्ण बातें कर रहे हों। यह उनका ढंग था, जिसके द्वारा बेवकूफी करते-करते वे अपने श्रोताओं को यह भी जता देते थे कि मैं अपनी बेवकूफी से परिचित हूँ और इसलिए बेवकूफ नहीं हूँ।

'हें-हें-हें, रंगनाथ बाबू! आपने भी क्या सोच लिया? मैं तो मौजूदा प्रधान की बातें बता रहा था।'

रंगनाथ ने प्रिंसिपल को गौर से देखा। यह आदमी अपनी बेवकूफी को भी अपने दुश्मन के ऊपर ठोंक कर उसे बदनाम कर रहा है। समझदारी के हथियार से तो अपने विरोधियों को सभी मारते हैं, पर यहाँ बेवकूफी के हथियार से विरोधी को उखाड़ा जा रहा है। थोड़ी देर के लिए खन्ना मास्टर और उनके साथियों के बारे में वह निराश हो गया। उसने समझ लिया कि प्रिंसिपल का मुक़ाबला करने के लिए कुछ और मँजे हुए खिलाड़ी की जरूरत है। सनिचर कह रहा था, 'पर बद्री भैया, इतने बड़े-बड़े हाकिम प्रधान के दरवाज़े पर आते हैं ... अपना तो कोई दरवाजा ही नहीं है; देख तो रहे हो वह टुटहा छप्पर!'

बद्री पहलवान हमेशा से सनीचर से अधिक बातें करने में अपनी तौहीन समझते थे। उन्हें संदेह हुआ कि आज मौका पा कर यहाँ मुँह लगा जा रहा है। इसलिए वे उठ कर खड़े हो गए। कमर से गिरती हुई लुंगी को चारों ओर से लपेटते हुए बोले, 'घबराओ नहीं। एक दियासलाई तुम्हारे टुटहे छप्पर में भी लगाए देता हूँ। यह चिंता अभी दूर हुई जाती है।'

कह कर वे घर के अंदर चले गए। यह मजाक था, ऐसा समझ कर पहले प्रिंसिपल साहब हँसे, फिर सनीचर भी हँसा। रंगनाथ की समझ में आते-आते बात दूसरी ओर चली गई थी। वैद्य जी ने कहा, 'क्यों? मेरा स्थान तो है ही। आनंद से यहाँ बैठे रहना। सभी अधिकारियों का यहीं से स्वागत करना। कुछ दिन बाद पक्का पंचायतघर बन जायेगा तो उसी में जा कर रहना। वहीं से गाँव-सभा की सेवा करना।'

सनीचर ने फिर विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़े। सिर्फ़ यही कहा, 'मुझे क्या करना है? सारी दुनिया यही कहेगी कि आप लोगों के होते हुए शिवपालगंज में एक निठल्ले को ...'

प्रिंसिपल ने अपनी चिर-परिचित 'हें-हें-हें' और अवधी का प्रयोग करते हुए कहा, 'फिर बहकने लगे आप सनीचर जी! हमारे इधर राजापर की गाँव-सभा में वहाँ के बाबू साहब ने अपने हलवाहे को प्रधान बनाया है। कोई बड़ा आदमी इस धकापेल में खुद कहाँ पड़ता है।'

प्रिंसिपल साहब बिना किसी कुंठा के कहते रहे, 'और मैनेजर साहब, उसी हलवाहे ने सभापति बन कर रंग बाँध दिया। किस्सा मशहूर है कि एक बार तहसील में जलसा हुआ। डिप्टी साहब आए थे। सभी प्रधान बैठे थे। उन्हें फर्श पर दरी बिछा कर बैठाया गया था। डिप्टी साहब कुर्सी पर बैठे थे। तभी हलवाहेराम ने कहा कि यह कहाँ का न्याय है कि हमें बुला कर फर्श पर बैठाया जाए और डिप्टी साहब कुर्सी पर बैठें। डिप्टी साहब भी नए लौंडे थे। ऐंठ गए। फिर तो दोनों तरफ़ इज्जत का मामला पड़ गया। प्रधान लोग हलवाहेराम के साथ हो ग। 'इंकलाब जिंदाबाद' के नारे लगने लगे। डिप्टी साहब वहीं कुर्सी दबाए 'शांति-शांति' चिल्लाते रहे। पर कहाँ की शांति और कहाँ की शकुंतला? प्रधानों ने सभा में बैठने से इनकार कर दिया और राजापुर का हलवाहा तहसीली क्षेत्र का नेता बन बैठा। दूसरे ही दिन तीन पार्टियों ने अर्जी भेजी कि हमारे मेंबर बन जाओ पर बाबू साहब ने मना कर दिया कि खबरदार, अभी कुछ नहीं। हम जब जिस पार्टी को बताएँ, उसी के मेंबर बन जाना।'

सनीचर के कानों में 'इंकलाब जिंदाबाद' के नारे लग रहे थे। उसकी कल्पना में एक नग-धड़ंग अंडरवियरधारी आदमी के पीछे सौ-दो सौ आदमी बाँह उठा-उठा कर चीख रहे थे। वैद्य जी बोले, 'यह अशिष्टता थी। मैं प्रधान होता तो उठ कर चला आता। फिर दो मास बाद अपनी गाँव-सभा में उत्सव करता। डिप्टी साहब को भी आमंत्रित करता। उन्हें फर्श पर बैठाल देता। उसके बाद स्वयं कुर्सी पर बैठ कर व्याख्यान देते हुए कहता कि 'बंधुओ! मुझे

कुर्सी पर बैठने में स्वाभाविक कष्ट है, पर अतिथि-सत्कार का यह नियम डिप्टी साहब ने अमुक तिथि को हमें तहसील में बुला कर सिखाया था। अत: उनकी शिक्षा के आधार पर मुझे इस असुविधा को स्वीकार करना पड़ा है।' कह कर वैद्य जी आत्मतोष के साथ ठठा कर हँसे। रंगनाथ का समर्थन पाने के लिए बोले, 'क्यों बेटा, यही उचित होता न?'

रंगनाथ ने कहा, 'ठीक है। मुझे भी यह तरकीब लोमड़ी और सारस की कथा में समझाई गई थी।'

वैद्य जी ने सनीचर से कहा, 'तो ठीक है। जाओ देखो, कहीं सचमुच ही तो उस मूर्ख ने भंग को हल्दी-जैसा नहीं पीस दिया है। जाओ, तुम्हारा हाथ लगे बिना रंग नहीं आता।'

बद्री पहलवान मुस्करा कर दरवाजे पर से बोला, 'जाओ साले, फिर वही भंग घोंटो!'

('राग दरबारी' का एक अंश)

[शीर्ष पर जाएँ](#)